International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 5, Issue 4, July 2018 |

हिंदी कहानी में समाज चित्रण प्रकृति और स्वरूप

Dr. Sudhir Soni

Associate Professor, Dept. of Hindi, Government PG College, Malpura, Tonk, Rajasthan, India

सार

हिन्दी कहानी की अब तक की विकास-यात्रा लगभग सौ वर्षों की ऐसी यात्रा है जिसमें जल्दी-जल्दी नये परिवर्तन होते रहे हैं। उसकी विकास-गति तीव्र और अपने समय-संदर्भो से घनिष्ठ रूप से जुड़ी रही है। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि हिन्दी कहानी ने बहुत कम समय में एक श्रेष्ठ साहित्यिक विधा का रूप प्राप्त कर लिया। बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध एवं इक्कीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध के वर्षों के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य को बहुत गहराई से प्रभावित किया है। पारिवारिक संबंधों का ताना-बाना बिखरने लगा है। संबंधों की धुरी केवल अर्थतंत्र में सीमित हो गई है। सारे मानवीय एवं आत्मीय रिश्ते अर्थाश्रित हो गए हैं। परम्परा एवं परिवेश से दूर मध्यम वर्ग मायावी दुनिया में दिग्भ्रमित है।

परिचय

हिन्दी गद्य की विभिन्न विधाओं में कहानी एक अत्यंत सशक्त एवं लोकप्रिय विधाओं में एक है। यह बदले हुए परिवेश एवं समाज के साथ यह निरन्तर अपने को नये रूप में ढालती रही है। स्वातंत्र्योत्तर दशकों में सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक परिवर्तनों के मद्देनज़र कहानी विधा में अनेकानेक आन्दोलन दृष्टिगत हुए यथा[1] – नयी कहानी, सहज कहानी, समान्तर कहानी, सचेतन कहानी, जनवादी कहानी आदि-आदि। आरंभिक हिन्दी कहानी पर प्रकाश डालने से पूर्व इस पर विचार कर लेना अपेक्षित है कि हिन्दी कहानी का आरंभ कब से हुआ? सामान्यतया सभी इतिहासकार यह स्वीकार करते हैं कि 'सरस्वती' पत्रिका (सन् 1900) के प्रकाशन के साथ ही हिन्दी कहानी का भी उदय हुआ। आरंभ में 'सरस्वती' में जो कहानियाँ प्रकाशित हुईं उनमें किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' जैसी वर्णनात्मक, केशवप्रसाद सिंह की 'आपत्तियों का पहाड़' जैसी स्वप्न-कल्पनाओं से भरपूर रोमांचक, कार्तिकप्रसाद खत्री की 'दामोदर राव की आत्म-कहानी' जैसी आत्मकथात्मक और पार्वतीनंदन की 'प्रेम की फुआरा' जैसी घटना-प्रधान सामाजिक कहानियाँ उल्लेखनीय हैं। समकालीन कहानीकारों ने वर्तमान जटिल यथार्थ, पल-पल परिवर्तित होते परिवेश, बदलते हुए जीवन मूल्यों को विभिन्न कोणों से देखा, परखा और अपनी अनुभूति के धरातल पर उस नये स्वर को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया। समकालीन कहानी जीवन के यथार्थ से सीधे टकराती है। वह जीवन के भोगे हुए सत्यों को ईमानदारी व प्रखरता के साथ अभिव्यक्त करती हुई आगे बढ़ती है। समकालीन कहानी में जो कुछ है, वह मनुष्य ही है, मनुष्य के इतर और कोई भेद नहीं।[2]

प्रसिद्ध समालोचक नामवर सिंह के अनुसार "कला माध्यम के रूप में कहानी के प्रति एक कलाकार को जितना आत्मसजग होना चाहिए, सामान्यत: कहानीकार उतने नहीं हैं....इधर कहानी पूरी तरह 'सामाजिक' हो गई है। और इस हद तक सामाजिक हुई है कि अमानवीय हो उठी है। पर कहानी जहाँ बनती है, वह सामाजिक यथार्थ का चित्रण नहीं बल्कि उसमें निहित मानवीय संवेदना है . . . हिन्दी कहानी स्थूल यथार्थवाद [3]के आतंक की छाया में विकास नहीं कर पा रही है और इसलिए वह जो मानवीय संवेदना है उसका उन्मोचन कहानी नहीं कर पा रही है।" 'नयी कहानी' में स्थूल कथानकों के स्थान पर सूक्ष्म कथा-तन्तुओं को प्रधानता मिली, सांकेतिकता, प्रतीकात्मकता और बिम्बात्मकता का प्राधान्य हुआ। नये कहानीकारों ने कहानी का नया आलोचना-शास्त्र तैयार करने की पहल की, और नामवर सिंह ने 'कहानी : नयी कहानी' पुस्तक के माध्यम से 'नयी कहानी' के मूल्यांकन की कसौटियों को रेखांकित किया। हिन्दी की समूची कहानी-यात्रा में 'नयी कहानी' का आन्दोलन सशक्त और प्रभावशाली आन्दोलन रहा है।[4]

स्वतंत्रता मिल जाने पर भारतीय मानस में एक नयी चेतना, नये विश्वास और नयी आशा-आकांक्षा का जन्म हुआ। उसे एक बदला हुआ यथार्थ मिला जिसने सामाजिक संबंधों, मूल्यों, मान्यताओं और आदर्शों को नया संदर्भ प्रदान किया। 'नयी कहानी' के आन्दोलनकारियों ने, जिसमें राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश और कमलेश्वर के नाम प्रमुख हैं – इस बदले हुए यथार्थ और नये अनुभव-संबंधों की प्रामाणिक अभिव्यक्ति पर बल दिया। नये कहानीकारों ने परिवेश की विश्वसनीयता', 'अनुभूति की प्रामाणिकता' और 'अभिव्यक्ति की ईमानदारी' का प्रश्न उठाया और आग्रह किया कि 'नयी कहानी' अपने युग-सत्य से सीधे जुड़ी हुई है जिसका मूल उद्देश्य है पाठक को उसके समकालीन यथार्थ से यथार्थ रूप में परिचित कराना।[5]

फणीश्वरनाथ रेणु, धर्मवीर भारती, मार्कण्डेय, अमरकान्त, भीष्म साहनी, कृष्णा सोबती, निर्मल वर्मा, मन्नू भण्डारी, शानी, ऊषा प्रियंवदा, हरिशंकर परसाई, शैलेश मटियानी जैसे कहानीकारों ने अपने युगीन यथार्थ की मार्मिक एवं प्रामाणिक अभिव्यक्ति करके 'नयी कहानी' के आन्दोलन को तीव्र किया। राजेन्द्र यादव ने 'एक दुनिया : समानान्तर' नामक पुस्तक का संपादन करके 'नयी कहानी' का एक प्रामाणिक संग्रह प्रस्तुत किया। इस संग्रह में जो कहानियाँ संकलित की गई हैं उनके नाम हैं – 'जिन्दगी और जोंक'

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 5, Issue 4, July 2018 |

(अमरकान्त), 'मछलियाँ' (ऊषा प्रियंवदा), 'मेरा दुश्मन' (कृष्ण बलदेव वैद), 'बादलों के घेरे' (कृष्णा सोबती), 'खोयी हुई दिशाएँ, (कमलेश्वर), 'गुलकी बन्नो' (धर्मवीर भारती), परिन्दे' (निर्मल वर्मा), 'सामान' (प्रयाग शुक्ल), तीसरी कसम उर्फ मारे गये गुल्फाम' (फणीश्वरनाथ रेणु), 'चीफ की दावत' (भीष्म साहनी), 'सही सच है' (मन्नू भण्डारी), 'दूध और दवा' (मार्कण्डेय), एक और जिन्दगी' (मोहन राकेश), 'विजेता' (रघुवीर सहाय), 'शबरी' (रमेश बक्षी), 'टूटना' (राजेन्द्र यादव), सेलर' (राम कुमार). 'एक नाव के यात्री' (शानी), 'नन्हों' (शिव प्रसाद सिंह), 'बदबू' (शेखर जोशी), प्रेतमुक्ति' (शैलेशा मटियानी), 'भोलाराम का जीव' (हरिशंकर परसाई)। इस सूची से यह सहज रूप से जाना जा सकता है कि 'नयी कहानी' के आन्दोलन के साथ कई बड़े हस्ताक्षर प्रकाश में आये। समकालीन हिंदी कहानीकारों में कुछ ऐसे भी हैं, जिनकी रचनाओं में विस्मय की व्याख्या करते हुए विश्वास तक पहुँचने के बजाय छद्म आधुनिकता के दबाव के तहत विस्मय से संशय व निराशा-हताशा की कलह-कोलाहलपूर्ण गलियों से होते हुए अंततः अविश्वास तक पहुँचने की प्रवृत्ति दिखाई देती है और कहना न होगा कि ऐसी कहानियों में मानवीय संसक्ति की खोज बेमानी है। चूँकि विस्मय से अविश्वास तक की यह यात्रा आधुनिकता की तमाम तथाकथित शर्तों– अलगाव, संत्रास, मूल्यविघटन आदि-को न सिर्फ़ पूरी करती है, बल्कि कई बार उसे महिमामंडित भी करती है, इसलिए इसके तहत रचित कहानियाँ हमारी संवेदना को सकारात्मक रूप में समृद्ध करने के बजाय हमें डराती हैं।[6]

कोई भी साहित्य या रचना या रचनाकार केवल तभी प्रासंगिक, समीचीन एवं शाश्वत कहला सकता है, जब वह अपने सामाजिक परिवेश, जीवन-पद्धति एवं समस्याओं के प्रति पाठक की संवेदनाओं को जागृत करने की सामर्थ्य रखता हो। व्यक्ति परिवार और समाज इन तीनों इकाइयों के मध्य होने वाली आपसी अन्तः क्रियाओं से सामाजिक सरोकारों की सृष्टि होती है। साहित्यिक संदर्भ में इसका तात्पर्य कोई कृति समाज के जिन-जिन पक्षों रूपों, आयामों, मुद्दों को विभिन्न रूपों में चित्रित करने से है। हर युग में युग की परिस्थितियों के अनुकूल नई कविता जन्म लेती रही है, और इस अर्थ में नि:सन्देह आज एक नई कहानी जन्म ले रही है और नि:सन्देह वह हमारे समय तक की संचित चेतना की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम बन रही है। नई कहानी से यह अर्थ कदापि नहीं है कि आज की कहानी ने पहले की परंपरा से सर्वथा विच्छिन्न होकर उसे 'पुरानी' की संज्ञा में बन्द कर दिया है और स्वयं उससे स्वतन्त्र होकर विकास कर रही है।[7]

हमारे समाज की विडम्बनापूर्ण त्रासदी है कि एक वर्ग के पास अकूत धन-सम्पदा है, दूसरे वर्ग के पास दो जून की रोटी मय्यसर नहीं हो पाती। वे दीन-हीन, शोषित, दलित, आँसू व पीड़ा से बेकल जीवन की बुनियादी ज़रूरतों से वंचित हैं। औद्योगिकीकरण के कारण समाज में अनेकानेक समस्याएँ यथा घनी और गंदी बस्तियों का निर्माण, वर्ग संघर्ष में अभिवृद्धि, बेकारी, औद्योगिक झगड़े, अपराध और अनैतिकता में वृद्धि, श्रमिक समस्याएँ इत्यादि का प्रसार हुआ है। सहज स्वाभाविक जीवन-शैली से दूर सर्वत्र कृत्रिम जीवन का खोखलापन हावी है।[8]

लेखिका अनीता नायर के अनुसार, "साहित्य हमेशा महिलाओं के प्रतिनिधित्व में अस्पष्ट रहा है। अच्छी महिलाओं के रूप में जिन्होंने सामाजिक मानदंडों को स्वीकार किया, उन्हें खुशी-खुशी पुरस्कृत किया गया। आज यथार्थ-चित्रण ने नये सिरे से यह प्रमाण प्रस्तुत किया है कि इसके जरिए ही श्रेष्ठ कहानियाँ लिखी जा सकती है। स्मरणीय है कि यथार्थ वह वस्तुसत्ता है, जिसका अस्तित्व हमारी चेतना से बाहर है, वह हमारी चेतना पर निर्भर नहीं करता, लेकिन जो हमारी चेतना को प्रभावित करता है। वस्तुतः इधर नये दौर में श्रेष्ठ हिंदी कहानी रचनाकारों की मनोदशा, उनकी मानसिक बुनावट या उनकी मानसिक-वैचारिक कल्पना के मुताबिक नहीं, बल्कि हमारे समय के यथार्थ के आग्रह से प्रेरित व प्रभावित तथा प्रेमचंदीय वृत्तात्मक यथार्थवाद से मुक्त होकर लिखी जा रही है। समकालीन हिंदी कथा साहित्य में स्त्री समस्या को ऐतिहासिक एवं सामजिक परिप्रेक्ष्य में उठाया है। चित्रा मुद्गल, उषा प्रियवंदा, मन्नू भण्डारी, अनामिका, मैत्रेयी पुष्पा, ममता कालिया इत्यादि अनेक कथाकारों ने समाज-रचना के वर्ग तथा वर्ग की विसंगतियों स्त्री के संत्रास, उसके अमानवीय शोषण का मार्मिक चित्रण कर, समतावादी सोच को आगे बढ़ाया है। ममता कालिया की कहानी ' जाँच अभी जारी है' में अपर्णा बैंक से मिले स्पष्टीकरण को बहाल कराते-कराते, दुनिया की नज़रों में गुनहगार हो जाती है। सच्ची एवं ईमानदार कार्मिक होने के बावजूद समाज की नज़र में भ्रष्ट बन जाती है। प्रत्येक व्यक्ति की नज़र उसके प्रति टेढ़ी हो जाती है।[9]

विचार-विमर्श

नई कहानी की एक और उपलब्धि अपेक्षया अधिक निर्वैयक्तिक दृष्टि है। यथार्थ-चित्रण के क्षेत्र में लेखक की व्यक्तिगत भावुकता के लिए अवकाश नहीं होना चाहिए। विश्व-कथा-साहित्य की उपलब्धियाँ इस बात को प्रमाणित करती हैं कि कहानी की सफलता बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करती है कि कहानीकार चरित्रों और उनकी परिस्थितियों के विधान में कहाँ तक नि:संग, तटस्थ और अयुक्त रह पाता है और अपनी घृणा या संवेदना की अभिव्यक्ति परिस्थितियों के वैज्ञानिक विश्लेषण या संघटन द्वारा ही करता है। जीवन के प्रति लेखक का निजी भावाग्रह आवश्यक है, परन्तु जो देखकर वह भावाग्रह जन्म लेता है, उसे वैसे ही दिखाकर दूसरे में वही भावाग्रह जाग्रत करने की योग्यता उसमें हो, न कि स्वयं एक व्याख्याकार का रोल अदा करते हुए। आज का कहानीकार अपनी क़लम की नोक को अपने दृष्टि-बिन्दु की तरह ही तीव्र करने में व्यस्त है। जो बिम्ब उसके सामने से गुज़रते हैं और उस पर

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 5, Issue 4, July 2018 |

अपनी छाप छोड़ जाते हैं, उनका ऐसा विधान, जो दूसरे पर अपेक्षित प्रभाव की सृष्टि कर सके, ही उसकी उपलब्धि का नया आयाम है। कहानी के सम्पूर्ण प्रभाव की अभिव्यक्ति बिम्बों द्वारा ही हो, लेखकीय टिप्पणियों के लिए उसमें अवकाश न रहे, इस पूर्ति तक आज की कहानी धीरे-धीरे पहुँच रही है।[10]

प्रेमचन्द के बाद हिन्दी कहानी दो सर्वथा अलग-अलग धाराओं में बँट गयी थी, जिनका प्रतिनिधित्व क्रमश: यशपाल और अज्ञेय की रचनाएँ करती हैं। आज की नई कहानी की सबसे प्रथम सिद्धि भारतीय जीवन के सामाजिक यथार्थ की भूमि को लेकर, उसके अन्तर्गत सांकेतिक प्रभावान्विति निर्वाह करने में है। परस्पर विपरीत जान पड़ती हुई दो अलग-अलग धाराओं की विशेषताओं का उसमें समन्वय हुआ है, इसलिए आज की कहानी उपलब्धियों के सम्बन्ध में एक या दूसरे वर्ग की अपनी धारणाओं के अनुकूल नहीं जान पड़ती। इसीलिए किन्हीं को आज की कहानी बहुत स्थूल और किन्हीं को उलझी हुई जान पड़ती है।[11]

साहित्य एवं समाज का बहुत गहरा संबंध है। सामाजिक परिवर्तनों में साहित्य की अहम भूमिका होती है। स्वतंत्रता से पूर्व साहित्य में सबका मुख्य स्वर स्वतंत्रता का था परन्तु आज लोकतंत्र के लुभावने नारों एवं राजनीतिक दलों के चुनावी घोषणा पत्रों के बीच नुचती अस्मिता, सत्ताधारियों के आश्वासनों की सड़ांध, घुटती साँसों के साथ आम आदमी की कुंठित भावनाएँ एवं आकांक्षाएँ, विवशता और नैराश्यपूर्ण अभिशप्त परिवेश का है। आज भी हम स्वर्ण-दलित, अगड़ी-पिछड़ी जातियों, अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक, अमीर-ग़रीब वर्ग की गहरी खाइयों में पड़े हुए हैं। समकालीन कहानीकारों के चिंतन एवं कल्पना केन्द्र में देशकाल की स्थिति के साथ-साथ समाज, सामाजिक एवं लोकतांत्रिक सरोकार सदैव उसके ज़ेहन में रहे हैं। व्यक्ति एवं समाज के उत्थान-पतन में राजनीति का योगदान सर्वाधिक होता है। राजनीति आज वह राजनीति नहीं है जो देश की व्यवस्था को नियंत्रित एवं संचालित करती हो।नए कहानीकार वस्तु और शिल्प दोनों दृष्टियों से कहानी के स्वरूप के परिमार्जन में व्यस्त हैं, इतना श्रेय तो उन्हें देना होगा। परन्तु नए-नए क्षेत्रों की खोज में और असुन्दर से सुन्दर तथा सुन्दर से असुन्दर तक की अपनी अनवरत यात्रा में यदि कहीं वे भटक जाते हैं तो इसे उन्हें नत-शिर होकर स्वीकार करना होगा। लेखक का मुख्य दायित्व अपने समय के प्रति है, एक कहानी-लेखक का विशेष रूप से, क्योंकि समय के यथार्थ की विविधता के अन्तर्गत एकसूत्रता का निर्देशन करने और निर्माणात्मक तथा विध्वंसात्मक शक्तियों की बहुमुखता के अन्तर्गत उनकी एकरूपता का परिचय देने का दायित्व मुख्यतया उसी पर आता है। जीवन के बहुत छोटे-छोटे और एक-दूसरे से बहुत दूर पड़े हुए खंडों में उन शक्तियों के प्रभाव को समझना, सामूहिक जीवन के संघटन के विश्लेषण का एक बहुत आवश्यक अंग है। जीवन को एक इकाई के रूप में ग्रहण करनेवाला लेखक, उसे गाँव-क़स्बा-नगर आदि प्रकोष्ठों में बाँटकर नहीं देखता।[12] जीवन एक सामूहिक इकाई है, और जो शक्तियाँ उसको बनाने या बिगाड़ने में कारण बन रही हैं, उन्हें किसी एक या दूसरे प्रकोष्ठ में बन्द करके नहीं देखा जा सकता है।

परिणाम

भारत की परम्परागत मूल्यों एवं आदर्शों की राजनीति जिसमें स्वतंत्रता-समता और बंधुता का वाहक माना गया है, को आधार मानकर लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था को अपनाया गया परन्तु उस अपेक्षा पर वर्तमान राजनीति खरी नहीं उतरती। भ्रष्टाचार एवं राजनीति के अपराधीकरण ने लोक कल्याण की भावना समाप्तप्रायः सी हो गयी है। औद्योगिक सभ्यता में बढ़ते उपभोगवाद एवं निर्बाध बाज़ार ने ग़रीबी एवं असमानता की समस्या को अधिक विकराल बना दिया है। बाज़ारवाद की प्रतिस्पर्धा में सर्वत्र उतावलापन, चौंकाउपन तथा विज्ञापनों की भरमार है। बाज़ार प्रेरित इस जीवन शैली में अतिरिक्त सौंदर्य, असहज और आतंककारी रूप में विद्यमान है। इस विडम्बनापूर्ण जीवन शैली में जीवन की त्रासदी यह है कि अनुपयोगी को उपयोगी दिखाया जाकर अमानवीय तरीक़े से लूट की जा रही है। मनोज रूपड़ा की कहानी 'साज-नसाज' से सौंदर्यबोध जीवन और व्यक्ति में घटित होने वाले त्रासद प्रभाव को बड़ी मार्मिकता से चित्रित किया है। जनवादी कहानी की मूल प्रवृत्ति श्रमजीवी के प्रति सहानुभूति है। वह श्रमजीवी जनता के हक़ की लड़ाई की पक्षधर है। पूँजीवादी ताक़तों को बेनक़ाब करना, उनके मंसूबों को विफल करना, शोषण-तंत्र को लुज-पुंज करना और मेहनतकश जनता को एकजुट करके निर्णायक संघर्ष की ओर ले जाना आदि कुछ मूलभूत वे बातें हैं जो किसी कहानी को जनवादी कहानी का रूप प्रदान करती हैं। जनसमस्याओं और जनजीवन के संघर्ष से जुड़ी होने के कारण जनवादी कहानी जनता की सीधी-सादी भाषा और सहज शिल्प को अधिक महत्व देती है। जनवादी कथाकार असगर वजाहत लिखते हैं – 'चारों ओर जो जीवन बिखरा है वही कहानी का मसाला है। पात्रों की कमी नहीं है। शिल्प के लिए परेशान होने की ज़रूरत नहीं है। कथ्य का अपना शिल्प होता है, उसी को रखते चले जाओ। किसी प्रकार का चमत्कार दिखाना कहानी का कार्य नहीं है।' तात्पर्य यह कि जनवादी कहानी आम आदमी या सामान्य जन की संघर्ष-गाथा को उसी की भाषा और शैली में चित्रित करने को महत्वपूर्ण मानती है।[13]

जनवादी कहानी को अपनी रचनात्मकता से गति देने वाले रचनाकारों में रमेश उपाध्याय (देवी सिंह कौन, कल्पवृक्ष), रमेश बतरा (कत्ल की रात, जिंदा होने के खिलाफ), स्वयं प्रकाश (आस्मां कैसे-कैसे, सूरज कब निकलेगा), हेतु भारद्वाज (सुबह-सुबह, अब यही होगा), नमिता सिंह (राजा का चौक, काले अंधेरे की मौत), असगर वजाहत (हिन्दी पहुँचना है, मछलियाँ), उदय प्रकाश (मौसा जी, टेपचू), राजेश जोशी (सोमवार, आलू की आँख), धीरेन्द्र अस्थाना (लोग हाशिये पर, सूरज लापता है), विजयकांत (ब्रह्मफांस, बलैत माखुन भगत, बान्ह, जाग), मदन मोहन (बच्चे बड़े हो रहे हैं, दारू) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।[14]

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 5, Issue 4, July 2018 |

निष्कर्ष

'नयी कहानी' में प्रयोगशीलता को प्रमुखता प्राप्त हुई। यह प्रयोगशीलता कथ्य एवं शिल्प दोनों स्तरों पर दिखाई पड़ती है। 'नयी कहानी' में कहानी के परम्परागत तत्व– कथानक, चरित्र-चित्रण, चरमबिन्दु, वातावरण आदि – नगण्य हो गये और इनका स्थान ले लिया सूक्ष्म कथात्मकता, जीवन-यथार्थ और उसे प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत करने वाली नयी भाषा-शैली ने। प्रत्येक कहानीकार ने वस्तु के अनुरूप नयी भाषा और शैली के प्रयोग और आविष्कार पर बल दिया। यथार्थता के आग्रह ने भाषा को भी यथार्थ रूप प्रदान किया। जैसा और जहाँ का जीवन – वैसी ही उसकी भाषा। आंचलिक कथ्य के लिए आंचलिक भाषा का प्रयोग हुआ। कहानी के शिल्प में संस्मरण, रेखाचित्र, डायरी आदि अनेक विधाएँ घुल-मिल गई। आधुनिकतावाद नगरीकरण की तेज़ प्रक्रिया, पूँजीवादी लोकतंत्र से मोहभंग, अस्तित्ववादी दर्शन तथा पश्चिमी प्रभाव के फलस्वरूप पैदा हुआ। इसके प्रभावस्वरूप पारंपरिक मूल्य बिखर गये, सामाजिकता की जगह वैयक्तिकता का प्राधान्य हो गया और व्यक्ति अपनी असमर्थताओं-असफलताओं से घिरकर हताश, निराश, कुंठित हो गया। सातवें दशक के हिन्दी कहानियों में आधुनिकताबोध की ये सभी प्रवृत्तियाँ परिलक्षित हुई हैं।[13]

नये जीवन-संदर्भो और स्थितियों की प्रामाणिक अभिव्यक्ति के लिए 'नयी कहानी' के लेखकों ने नवीन कथा-शिल्प का आविष्कार किया। सांकेतिकता, प्रतीकात्मकता और बिम्बात्मकता को विशेष महत्व दिया गया। प्रो० नामवर सिंह के अनुसार 'नयी कहानी' में 'सांकेतिकता देह में रक्त या प्राण' जैसी है। उनके अनुसार 'नयी कहानी' संकेत ही नहीं करती, वह स्वयं एक संकेत है। इसी तरह प्रतीकात्मकता का भी सहारा कथ्य को स्पष्ट और संप्रेष्य बनाने के लिए लिया गया है। बिम्बात्मकता से नयी कहानी की भाषा में सूक्ष्म ऐन्द्रियता का विस्तार हुआ और साथ ही छिपे हुए आलोक के यथार्थ का उपस्थापन भी। आधुनिक विधा के रूप में हिन्दी कहानी का तीव्र एवं अनेक आयामी विकास हुआ है। आरंभ से लेकर स्वतंत्रता-प्राप्ति तक बृहत्तर जीवन संदर्भो से जुड़ने और समय-समय पर बड़े कहानीकारों की कला का सहारा पाने के कारण हिन्दी कहानी के कथ्य और शिल्प में बराबर परिवर्तन होता रहा। प्रेमचंद ने जहाँ इसे आरंभ में आदर्शवाद, सुधारवाद से संयुक्त करके अपने समय की आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला, वहीं बाद में इसे यथार्थवादी शिल्प भी प्रदान किया और इसके सामाजिक आधार को पुष्ट किया। आपने यह भी देखा कि विभिन्न कहानी आन्दोलनों ने हिन्दी कहानी को बराबर एक नयी दिशा दी है।[14]

संदर्भ

1. गंगा प्रसाद विमल , समकालीन कहानी दशा और दृष्टि , पृष्ठ - 166
2. विश्वनाथ तिवारी , रचना के सरोकार , पृष्ठ - 32
3. डॉ . धीरज भाई वणकार , कमलेश्वर की कहानी में यथार्थ , पृष्ठ - 178
4. डॉ . पुष्पाल सिंह , समकालीन कहानी , युगबोध का संदर्भ , पृष्ठ - 126
5. ममता कालिया , फर्क नहीं , पृष्ठ - 124
6. ममता कालिया , जाँच अभी जारी है , पृष्ठ - 40
7. चित्रा मुद्दगल , आदि अनादि (भाग - तीन) , पृष्ठ - 60
8. पाखी , जून 2012, पृष्ठ - 35
9. राजी सेठ , अंधे मोड़ से आगे , पृष्ठ - 113
10. पुष्पपाल सिंह , समकालीन कहानी , युगबोध का संदर्भ , पृष्ठ - 117
11. वेदप्रकाश अमिताभ , दुःख के पुल से , पृष्ठ - 15
12. अरविन्द कुमार सिंह , उसका सच , पृष्ठ - 46-47
13. मनोज रूपड़ा , साज - नसाज , श्रेष्ठ हिन्दी कहानियां 1999-2000, पृष्ठ - 231
14. गीतांजली श्री , यहां हाथी रहते थे , पृष्ठ - 48